IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

अथर्ववेद में वर्णित मानसिकरोगों के निवारणोपाय

वेणुधर दाश

शोधच्छात्र (वेद-विभाग)

ज.रा.रा.संस्कृत विश्वविद्यालय, जयपुर

सारांश

मन की स्वस्थता व प्रसन्नता से मनुष्य नीरोग होता है। मन का प्रदूषण रोगों का कारण है। अतः मैत्रायणी उपनिषद मे कहा गया है कि मन ही मनुष्यों के बन्ध मोक्ष का कारण है[1] । ऋग्वेद और यजुर्वेद में कहा गया है कि पाप रोग व्याधियों का नाश करके मन शुद्ध करो। यजुर्वेद में भी प्रार्थना की गई है **"तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तु"** । चरक महोदय का मत है कि मानस रोग प्रज्ञापराध से पैदा होते हैं। चरक महोदय ने प्रज्ञापराध की परिभाषा करते हुए कहा है कि धी, धृति, स्मृति के भ्रष्ट होने से ही मनुष्य अनुचित कार्य करता है। उससे उत्पन्न रोग प्रज्ञापराधजन्य रोग कहलाते है और इससे ही शारीरिक मानसिक रोग कुपित हो जाते हैं[2]। बुद्धि द्वारा उचित रुप से वस्तुओं की अज्ञानता तथा अनुचित कर्मों में प्रवृत्ति प्रज्ञापराध दोष कहा गया है।

कूट शब्दः- मानसिक रोग, स्वस्थता, प्रदूषण, सत्य, संकल्प, चिकित्सा

अथर्ववेद में विभिन्न प्रकार की चिकित्सा पद्धतियों का उल्लेख प्राप्त होता है। जैसे योग- चिकित्सा, आंगिरसी, दैवी, मन्त्र चिकित्सा आदि। इन सबमें मान चिकित्सा का विशेष स्थान है। मानसिक रोग दो प्रकार के होते हैं-

1. ईर्ष्या, शोक, भय, कोध, अहंकार, द्वेष और दुःस्वप्न जन्य मानसिक रोग।
2. उन्माद आदि व्याधि रुप शारीरिक दोष ।

चरक महोदय का मत है कि मानस रोग प्रज्ञापराध से पैदा होते हैं। चरक महोदय ने प्रज्ञापराध की परिभाषा करते हुए कहा है कि- धी, धृति, स्मृति के भ्रष्ट होने से ही मनुष्य अनुचित कार्य करता है। उससे उत्पन्न रोग प्रज्ञापराधजन्य रोग कहलाते है और इससे ही शारीरिक मानसिक रोग कुपित हो जाते हैं । बुद्धि द्वारा उचित रुप से वस्तुओं की अज्ञानता तथा अनुचित कर्मों में प्रवृत्ति प्रज्ञापराध दोष कहा गया है ।

[1] मैत्रायणी उपनिषद

[2] चरक संहिता

मन की स्वस्थता व प्रसन्नता से मनुष्य नीरोग होता है। मन का प्रदूषण रोगों का कारण है। अतः मैत्रायणी उपनिषद मे कहा गया है कि मन ही मनुष्यों के बन्ध मोक्ष का कारण है । ऋग्वेद और यजुर्वेद में कहा गया है कि पाप रोग व्याधियों का नाश करके मन शुद्ध करो। यजुर्वेद में भी प्रार्थना की गई है- **तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तु**[1] ।

मेरा मन शुभ विचार वाला हो, मन ही मनुष्य की सब क्रियाओं व चेष्टाओं का नियन्त्रक होता है । संयमशील मन योग्य सारथि के समान मनुष्य को उचित मार्ग पर ले जाता है। यदि मन कलुषित है तो शरीर भी कलुषित और रोगग्रस्त होता है। इसीलिए ब्राह्मणग्रन्थों और उपनिषद में कहा गया है -

मन एव सर्वम्, मनोब्रह्म ।।
मनो वै प्रजापतिः।
मनो वै सम्राट् परब्रह्म।

मानस रोगों का कारण मन है अतः इसकी चिकित्सा भी मन से ही होती है। अथर्ववेद में मानसिक चिकित्सा का विवरण प्राप्त होता है कि वरुण देव ने मनोवैज्ञानिक उपचार से चिकित्सा की-

"त्वं मनसाचिकित्सीः"[2]

मन में अनेकों शक्तियाँ हैं, मन कठिन से कठिन कार्य को सरल कर देता है। मन मानव के हृदय में विद्यमान एक अक्षय ज्योति है। यह ज्योति आत्मिक बल, मनोबल और इच्छा शक्ति प्रदान करती है-

य ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु ।[3]

अथर्ववेद में कहा गया है कि मन यदि रोगों का कारण है तो उनका निवारण भी है। यथा-

इदं यत् परमेष्ठिनी मनो वां.....। येनैव ससृजे घोरं तेनैव शान्तिरस्तु नः।[4]

मनोबल के ह्रास ही रोग, शोक आदि का कारण है तो उसका उत्थान दोषों का विनाशक है। ऋग्वेद का कथन है कि मनोबल के विकास से मृत्यु के मुख में गया हुआ भी छूट जाता है-

यमादहं वैवस्वातात् सुबन्धोर्मन आभरम् ।[5]

मनोवैज्ञानिक चिकित्सा के अन्तर्गत मनोबल के विकास के अतिरिक्त आश्वासन चिकित्सा और संकल्प चिकित्सा भी आती हैं। रोगी के लिए आश्वासन देकर उसका मनोबल बढाना भी चिकित्सा का एक प्रकार है। अथर्ववेद के अनेक मन्त्रों में अनेक प्रकार की आश्वासन चिकित्सा प्राप्त होती है। जैसे हे रुग्ण ! मत डरो तुम नही मरोगे, मैं तुम्हे जीवन देकर शतायु करता हूँ –

[1] यजुर्वेद, शिवसंकल्प सूक्त
[2] अथर्ववेद.5/11/1
[3] यजुर्वेद.34/3
[4] अथर्ववेद.19/9/4
[5] ऋग्वेद.10/60/10

सो अरिष्ट न मरिष्यसि,न मरिष्यसि मा विभेः ।।[1]

मा विभेर्न मरिष्यसि, जरदष्टिं कृणोमि त्वा ।।[2]

तुम औषधि खाओ मैं तुम्हे दीर्घायु करता हूँ -

प्रत्यक् सेवस्व भेषजं जरदष्टिं कृणोमि त्वा।[3]

कुशल वैद्य आश्वासन चिकित्सा से रोगी का मनोबल बढ़ाता है और उसका रोग निवारण करने में सफल हो जाता है।

मानसिक चिकित्सा की एक विधा संकल्प चिकित्सा भी है। मन की शक्ति अपरिमित है। मन की सर्वप्रथम गति व अपार दृढ़ प्रबल शक्ति ही संकल्प है। अपितु संकल्प ही मन विकास का कारण है। अथर्ववेद में कहा गया है -

कामस्तदग्रे समवर्तत मनसो रेतः प्रथमं यदासीत्।
स काम कामेन बृहता सयोनि रायस्पोषं यजमानाय धेहि ।।[4]

अर्थात् मन में सर्वप्रथम संकल्प होता है पुनः वह उद्यम या अधिकार संकल्पपूर्वक मन में इच्छाशक्ति को प्रबल करता है। अनेक प्रकार से बारम्बार अभ्यास से मन आन्दोलित होकर विद्युत के समान अपनी पूर्ण शक्ति को अभीष्ट भाव के प्रति प्रेरित कर उसको आकर्षित करता है। जैसे दो विद्युत तरंगे होती हैं वैसे ही मन में भी दो तरंगें होती है बोध और प्रतिबोध[5]। लौकिक भाषा में इन्हे संकल्प विकल्प कहते हैं। बोध या संकल्प में अभीष्ट को प्राप्त करने की इच्छा होती है। प्रतिबोध या विकल्प में न चाहने वाली वस्तु को निवारण करने की इच्छा होती है। इस प्रकार संकल्प और विकल्प एक मन से मिलकर मानसिक विद्युत पैदा करते हैं जो विशुद्ध अभीष्ट के आकर्षण और अनैच्छिक का निवारण करने के लिए पैदा होती है। जैसे विद्युत तरंगे जल कर प्रकाशित होती हैं वैसे ही मन की संकल्प और विकल्प रूपी तरंगे मनुष्य के जीवन में अभीष्ट कार्य को प्रकाशित करती हैं व अनभीष्ट कार्य को जलादेती है। मन की शक्ति से तथा हाथ के स्पर्श से मनुष्य के पाप, निर्बलता, त्रुटि और विभिन्न रोगों का नाश कर सकते है।

हस्ताभ्यां दशशाखाभ्यां जिह्वा वाचः पुरोगवी।
अनामयित्नुभ्यां हस्ताभ्यां त्वाभि मृशामसि ।।[6]

संकल्प शक्ति से पापदूर करने के विषय में अथर्ववेद कहता है-

[1] अथर्ववेद.8/22/4
[2] अथर्ववेद.5/30/8
[3] अथर्ववेद.5/30/5
[4] अथर्ववेद.19/52/1
[5] अथर्ववेद.5/30/10
[6] अथर्ववेद.4/13/7

परोऽपेहि मनस्ताप किमशस्तानि शंससि।
परेहि न त्वा कामये वृक्षां वनानि सं चर गृहेषु गोषु मे मनः।।[1]

अर्थात् हे मन के पाप ! दूर हो जाओ । मैं तुम्हारी इच्छा नहीं करता।

पुनः आशा, उत्साह व सफलता प्राप्त करने के संकल्प के लिए अथर्ववेद में कहा गया है-

कृतं मे दक्षिण हस्ते जयो मे सव्य आहितः ।
गोजिद् भूयासमश्वजिद् धनञ्जयो हिरण्यजित् ।।[2]

अर्थात् प्रत्येक कार्य करने के लिए मन में दृढ़ संकल्प, इच्छाशक्ति, आशा और उत्साह को धारण करना चाहिए। कर्म करने में तभी सफलता प्राप्त होगी जब हम सोचेगें कि हम कर्महीन नहीं हैं सफलता हमारा अधिकार है, यह भावना धैर्य पूर्वक मन में धारण कर कार्य करना चाहिए। सफलता चाहे शीघ्र मिले या देर से मिलेगी अवश्य इसी भावना से कार्य में प्रेरित होना चाहिए। त्रुटि, दोष और न्यूनता को दूर करने के संकल्प के लिए यजुर्वेद में मन्त्र मिलता है -

अग्ने यन्मे तन्वा नन्तन्म आपृण।[3]

अर्थाम् हे परमात्मा ! मेरे शरीर, इन्द्रियों और मन में जो न्यूनता, त्रुटि, निर्बलता और असमर्थता आदि दोष हैं, मेरे अन्दर से दूर करो, ऐसी प्रार्थना करता हूँ। रोग दूर करने के संकल्प के विषय में अथर्ववेद में कहा गया है-

अपेहि मनसस्पतेऽप क्राम परश्चर।
परो निर्ऋत्या आ चक्ष्व बहुधा जीवतो मनः।।[4]

संकल्प चिकित्सा में रोगी को कोई औषधि न देकर उसका मनोबल बढवाया जाता है। मनोबल बढ़ने से रोगी के अन्दर एक अपूर्व चेतना जाग जाती है वह अपने को रोगमुक्त समझने लगता है तथा रोगी के दृढ़ आत्मबल से रोगकीट नष्ट हो जाते हैं और रोगी स्वस्थ हो जाता है-

यत्ते मनस्त्वयि तद् धारयामि सं वित्स्वाङ्गैर्वद जिह्वायालपन् ।[5]

विदेशों में भी 'ओटो सजस्सन' विधि का बहुत प्रयोग होता है जिससे असाध्य रोग भी साध्य किये गये हैं। मानस चिकित्सा में मन की पवित्रता और चरित्र की शुद्धता के लिए प्रयत्नशील होना चाहिए। चरित्र शुद्ध होगा तो रोग शीघ्र दूर होंगें। अथर्ववेद में वर्णन मिलता है कि बृहस्पति ने सत्य से रोगी को मृत्यु के मुख से छुड़ाया-

तं ते सत्यस्य हस्ताभ्याम् उदमुञ्जद् बृहस्पतिः।

[1] अथर्ववेद.6/45/1
[2] अथर्ववेद.7/50/8
[3] यजुर्वेद.3/17
[4] अथर्ववेद.20/96/24
[5] अथर्ववेद.8/2/3

अष्टांग हृदय में वाग्भट्ट कहते हैं कि दयालु राग द्वेष से मुक्त मन से समस्त प्रकार के ज्वर नष्ट हो जाते हैं –

करुणाद्रं मनः शुद्धंसर्व ज्वर विनाशनम् ।[1]

इस प्रकार ज्ञात होता है कि मन की पवित्रता, धार्मिकता और सत्यशीलता से समस्त रोगों का नाश किया जा सकता है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि वेद इस पृथ्वी पर मानव के कल्याणार्थ अनुपम व अद्वितीय निधि है, जिसमें समस्त ज्ञान-विज्ञान का भण्डार है । सारे रोग चाहे शारीरिक हो या मानसिक सबका निदान वेदों में निहित है।

सन्दर्भग्रन्थसूची

1. मिश्रः, जगदीशचन्द्रः। वैदिकवाङ्मयस्येतिहासः। वाराणसी: चौखम्वासुरभारती प्रकाशनम् 2009 ।
2. उप्रेती, जयदत्त । वेद में इन्द्र । वाराणसी चौखम्वा संस्कृत सीरीज अफिस 2012 ।
3. पाठकः, यमुना, सम्पादकः । निरुक्तम् । वाराणसी, चौखम्वा संस्कृत सिरिज अफिस 2010 ।
4. राय, रामकुमार, अनुवादक । वैदिक माइथोलोजी । वाराणसी, चैखम्बा विद्याभवन प्रकाशन 2007 ।
5. ठाकुर, अमरेश्वर, सम्पादक । निरुक्तम् । 1-4 खण्ड । कोलकाता, कोलकाता विश्वविद्यालय 2016 ।
6. भट्टाचार्य, विष्णुपद । वैदिक देवता । विश्वभारती : विश्वविद्यासंग्रह 1357 (बङ्गाब्द)।
7. त्रिवेदि, रामगोविन्द, अनुवादक। ऋग्वेदसंहिता सायणाचार्यकृत भाष्यसंवलिता । 1-9 खण्ड वाराणसी : चौखम्वा विद्याभवन प्रकाशन, 20111 ।
8. सरस्वती, सत्यप्रकाश, सम्पादक। शतपथ ब्राह्मण। 1-3 खण्ड। दिल्ली : गोविन्दराम हासानन्द, 2010।

[1] अष्टांगहृदय.1/113